इस्लाम और

मानव-एकता

सैयद जलालुद्दीन उमरी

अनुवाद

अशरफ़ अली मुजाहिद

विषय-सूची

कुछ लेखक के बारे में

मौलाना सय्यद जलालुद्दीन उमरी (जन्मः 1935) भारत के एक मुस्लिम विद्वान, मनीषी और प्रतिष्ठित एवं विश्वसनीय लेखक के रूप में जाने जाते हैं। सम्बन्धित विषय के तमाम पहलुओं पर समग्र दृष्टि तथा भाषा एवं शैली का रख रखाव उनकी रचनाओं की मुख्य विशेषता है।

मौलाना जलालुद्दीन का जन्म अपनी पैत्रिक जन्मभूमि 'नार्थ आरकाट' (तमिलनाडु) में हुआ। आरंभिक शिक्षा घर ही पर प्राप्त की। उच्च शिक्षा के लिए प्रसिद्ध इस्लामी शैक्षणिक संस्थान जामिआ दारुस्सलाम-उमराबाद में प्रवेश लिया। वहां से 'फ़ज़ीलत' की डिग्री प्राप्त करने के पश्चात मद्रास युनिवर्सिटी से 'मुंशी फ़ाज़िल' का इम्तहान पास किया। तत्पश्चात अलीगढ़ मुस्लिम युनिवर्सिटी से 'बी.ए.' की उपाधि प्राप्त की।

मौलाना इस समय निम्न पदों पर कार्यरत हैं :

- नायब अमीर (उपाध्यक्ष प्रशिक्षण विभाग) जमाअत इस्लामी हिंद
- सदस्य, केन्द्रीय सलाहकार परिषद जमाअत इस्लामी हिंद
- सेक्रेट्री, इदारा तहक़ीक़ व तस्नीफ़े इस्लामी अलीगढ़
- सम्पादक त्रैमासिक पत्रिका 'तहक़ीक़ाते-इस्लामी' अलीगढ़
- संस्थापक सदस्य, आल इंडिया मुस्लिम पर्सनल ला बोर्ड (AIMPLB)
- सदस्य, आल इंडिया मुस्लिम मजलिसे मुशावरत
- सदस्य, इशाअते-इस्लाम ट्रस्ट दिल्ली
- अमीरुल जामिआ, जामिअतुल फ़लाह बिलरियागंज, आज़मगढ़ बिलरियागंज
- मैनेजर, सिराजुल-उलूम निसवां (महिला) कालिज, अलीगढ़

उपरोक्त पदों का दायित्व निभाने के साथ इस्लामी साहित्य के निर्माण में मौलाना का महत्वपूर्ण एवं विशिष्ट योगदान है और अब तक उनकी छोटी-बड़ी डेढ़ दर्जन से अधिक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। जिनमें से कुछ विशेष पुस्तकें ये हैं :

मारूफ़-मुनकर, इस्लाम की दावत, इंसानों की ख़िदमत, इंसान और उसके मसाएल, ख़ुदा और रसूल का तसव्वुर, औरत-इस्लामी मआशरे में, मुस्लिम ख़वातीन की दावती ज़िम्मेदारियां, सेहत और मर्ज़, इस्लामी तालीमात।

–प्रकाशक

बिसमिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम
(अल्लाह के नाम से, जो अत्यन्त करुणामय और दयावान है)

मनुष्यों में विचार एवं व्यवहार की विविधता

यदि पिछले, वर्तमान और भविष्य के सारे मनुष्य किसी एक स्थान पर एकत्र किए जाएँ और उनसे उनकी भावनाओं, अनुभूतियों एवं उनकी आवश्यकताओं के सम्बन्ध में प्रश्न किया जाए तो सबके उत्तर एक समान होंगे । कोई भी व्यक्ति ऐसा नहीं होगा जो सुख और दुख की भावनाओं और नैसर्गिक प्रेरणाओं से रिक्त हो या उसकी भावनाएँ दूसरों की भावनाओं से और उसकी नैसर्गिक प्रेरणाएँ दूसरों की नैसर्गिक प्रेरणाओं से भिन्न हों, किन्तु इसके बावजूद मनुष्य विभिन्न सम्प्रदायों और गिरोहों में विभाजित हैं और प्रत्येक सम्प्रदाय, दूसरे सम्प्रदाय का प्रतिद्वन्द्वी है । मानो प्रत्येक गिरोह और प्रत्येक व्यक्ति की प्रकृति अलग और उनकी आवश्यकताएँ भिन्न एवं विपरीत हैं । एशिया का रहनेवाला अपने जीवन के लिए जिन चीज़ों का मुहताज है, अमरीका का निवासी उनसे निस्पृह और निष्काम । यूरोप की मौलिक आवश्यकताएँ अफ्रीका की मौलिक आवश्यकताओं से अलग हैं, रोमवालों की जो भावनाएँ और अनुभूतियाँ हैं यूनानी उससे भिन्न भावनाएँ और अनुभूतियाँ रखते हैं ।

जीवन के लक्ष्य-निर्धारण में विफलता

जब वास्तविकता यह है कि सारे ही इनसान अपनी प्राकृतिक भावनाओं, सैद्धान्तिक हितों और मौलिक आवश्यकताओं की दृष्टि से एक इकाई हैं तो वह कौन-सी चीज़ है, जो उनको संघर्ष और टकराव की ओर ले जाती है और एक-दूसरे को क्षति पहुँचाने और रक्तपात करने पर उभारती है ? इसका उत्तर यह है कि मनुष्य इस संसार में अपने जीवन के लिए एक ऐसा लक्ष्य चाहता है जो उसकी कामनाओं और अभिलाषाओं का केन्द्र हो, जिसके चतुर्दिक वह अपनी समस्त शक्तियों और योग्यताओं को घुमा दे, जिस पर अपनी जान-व-माल और समय को न्यौछावर कर दे, जिसे पाकर वह शांति और सन्तुष्टि महसूस करे और जिसे वह अपने जीवन की उपलब्धि समझे । इस प्रकार के किसी लक्ष्य के बिना उसे शांति नहीं मिल सकती, बल्कि वह जीवित नहीं रह सकता । जीवन के इस लक्ष्य को पाने में वह भटकता रहा है । यहीं से उसकी विफलता और दुर्भाग्य की कहानी शुरू होती है ।

जीवन के अधूरे लक्ष्य

इस संसार में अधिकांश मनुष्यों का जीवन-लक्ष्य बहुत ही तुच्छ और मामूली

होता है । वे अपने व्यक्तित्व के चतुर्दिक भ्रमण करते रहते हैं या अधिक-से-अधिक बीवी-बच्चों का हित उनके सामने होता है । कुछ लोग इससे ऊपर उठकर सोचते भी हैं तो उनकी दृष्टि सीमित ही रहती है और छोटे-छोटे उद्देश्यों ही पर वह अपनी शक्ति एवं सामर्थ्य लगाते हैं । लेकिन यह एक वास्तविकता है कि कोई भी सीमित उद्देश्य, चाहे वह अपनी जगह कितना ही लाभप्रद और उपयोगी क्यों न हो, सारे मनुष्यों और उनके विभिन्न वर्गों और गिरोहों का उद्देश्य नहीं बन सकता । उससे प्रेम सबके लिए सम्भव नहीं है, बल्कि उससे रुचि भी प्रत्येक को मुश्किल ही से पैदा हो सकती है । यही चीज़ मनुष्यों के बीच सारे मतभेदों और संघर्षों का मूल कारण है ।

परिवार और समुदाय का कल्याण

इन सीमित जीवन-लक्ष्यों का एक इतिहास है । मनुष्य जब क़बायली जीवन व्यतीत कर रहा था तो उसने सोचा कि उसके जीवन का उद्देश्य परिवार और वंश (क़बीले) की सेवा है, वंश के हितों के लिए संघर्ष, उसकी सहायता एवं उसका समर्थन और शत्रु से उसकी प्रतिरक्षा करना मनुष्य का परम कर्त्तव्य है, क्योंकि परिवार ही मनुष्य के पालन-पोषण की जगह है, वह उसको अस्तित्व में लाता और दौड़-धूप के योग्य बनाता है । उसकी समस्त शक्तियाँ और योग्यताएँ अपने समूह के उपकारों का प्रतिफल होती हैं । अतः इन शक्तियों का सर्वोत्तम उपयोग भी वंश की सेवा ही हो सकती है । वह मनुष्य सफल है जिसकी शक्तियाँ और योग्यताएँ उसके वंश की सेवा में अर्पित हों ।

स्वभाषियों का हित

इतिहास जब कुछ और आगे बढ़ा तो मनुष्य ने कहा कि उसकी शक्तियों और योग्यताओं को अकेले वह वंश नहीं उभारता जिसमें वह पैदा हुआ है, बल्कि उसकी प्रगति और विकास में बहुत-से दूसरे परिवार और वंश भी सहभागी होते हैं, इसलिए यह उचित नहीं होगा कि मनुष्य केवल अपने वंश के विषय में सोचे और उसी के हित के लिए सब कुछ करे । उसकी सेवाओं और बलिदानों का दायरा अपने वंश तक सीमित नहीं होना चाहिए बल्कि उसे उन सभी वंशों तक विस्तृत होना चाहिए ज़ो एक भाषा बोलते हैं; क्योंकि भाषा ही विभिन्न वंशों को जोड़ने का साधन है । इसी से विचारों में समानता पैदा होती है और विभिन्न वंश एक-दूसरे के समीप आते और एक-दूसरे के सहायक बनते हैं ।

इसमें सन्देह नहीं कि परिवार, वंश और अपनी भाषा बोलनेवालों से प्रेम के

फलस्वरूप उनकी सेवा और सुरक्षा की भावना उभरी, कल्याणकारी योजनाएँ बनीं, शत्रुओं से प्रतिरक्षा के प्रयास हुए, प्रगति के रास्ते तलाश किए गए और एक विशेष सीमा में लाभ भी पहुँचा, लेकिन यही चीज़ दूसरे वंशों और दूसरी भाषा बोलनेवालों से दूरी का कारण भी बनी । जहाँ एक वंश का हित दूसरे वंश के हित से या एक भाषा बोलनेवाले के हित दूसरी भाषा बोलनेवालों के हितों से टकराया तो मतभेद उभरे, शत्रुता और वैमनस्य सामने आए, मुठभेड़ के मैदान तैयार हुए और हत्या एवं संहार से धरती लहू-लुहान होती रही । इतिहास इस तबाही और विनाश का अवलोकन करता रहा है ।

राष्ट्रीयता की भावना और उसके दोष

भाषा के विस्तार को भी बहुधा कुछ सौ या हज़ार मील की दूरी समाप्त कर देती है । मनुष्य के हितों का दायरा उससे अधिक विस्तृत भू-भाग और बहुत दूर तक फैला हुआ है । वह ऐसे व्यक्तियों और समूहों से भी सम्बन्ध रखने पर बिवश है जिनकी भाषा उसकी भाषा से यद्यपि भिन्न होती है लेकिन जिनसे उसका घनिष्ट आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक सम्पर्क होता है और जो उससे निकटता और अपनापन महसूस करते हैं । यह सम्पर्क एवं सम्बन्ध सामान्यत: धरती के उस भाग तक फैले हुए मनुष्यों के मध्य पाया जाता है जिसे पहाड़ों, समुद्रों, पैदावार के साधनों, जलवायु और मौसम की एकरूपता ने एक कर दिया हो और जो भौगोलिक दृष्टि से दूसरे भूभाग से अलग समझा जाता हो । मनुष्य चूँकि धरती के उस पूरे भाग से और उसकी एक-एक वस्तु से लाभान्वित होता है, उसी से उसकी सभ्यता और संस्कृति प्रस्फुटित होती है, इसीलिए कहा गया कि मनुष्य के समक्ष उस पूरे भू-भाग की सेवा होनी चाहिए चाहे उसमें कितनी ही भाषाएँ बोली जाती हों, कितने ही समुदाय और जातियाँ आबाद हों और कितने ही रंग एवं नस्ल के लोग बसते हों । यही भावना राष्ट्र और देश का आधार है । राष्ट्रीयता और देशभक्ति के कुछ दूसरे कारण भी रहे हैं । इन सबके बावजूद यह एक वास्तविकता है कि राष्ट्र और देश की सेवा और उसकी सहायता एवं समर्थन जीवन का एक बड़ा उद्देश्य रहा है । आधुनिक युग में भी इसे सर्वोच्च जीवन-लक्ष्य माना जाता है । ऐसे लोगों के निकट राष्ट्र और देश के लिए जीना और मरना और हर प्रकार से एवं प्रत्येक स्थिति में उसका पक्ष लेना मनुष्य का चरमोत्कर्ष है । जो व्यक्ति इस उद्देश्य के लिए प्राण उत्सर्ग कर दे वह इस योग्य समझा जाता है कि उसकी यादगार मनाई जाए । उसके मरने के पश्चात् उसकी प्रतिमा के सामने सम्मान स्वरूप विनयपूर्वक अभिवादन किया जाए और उसकी स्मृति को इतिहास के पन्नों में सुरक्षित कर दिया जाए ।

राष्ट्रीयता की भावना से संस्कृति में दो बड़ी बुराइयाँ उत्पन्न होती हैं । पहली बुराई यह है कि यह सिद्धान्त अपने स्वभाव की दृष्टि से मनुष्य में पक्षपात और हठधर्म पैदा करता है, जो व्यक्ति वास्तव में राष्ट्रभक्त होगा वह निश्चित रूप से केवल अपने राष्ट्र का भला चाहेगा । उसे किसी दूसरे राष्ट्र के कल्याण और उसकी सफलता से कोई रुचि नहीं होगी और अगर होगी भी तो उसी समय जबकि वह उसके अपने राष्ट्र के लिए हितकर हो । हर स्थिति में राष्ट्रीय हित ही उसके समक्ष होगा, जिस काम में वह राष्ट्र का लाभ देखेगा उसकी ओर दौड़ पड़ेगा, चाहे वह दूसरे राष्ट्र के लिए कितना ही हानिकारक क्यों न हो, और जिस काम में राष्ट्रीय हानि होगी वह उसके लिए अनावश्यक बल्कि अवैध ठहराएगा चाहे उस काम से किसी दूसरे राष्ट्र को बड़ा-से-बड़ा लाभ ही क्यों न हो । उसे आप राष्ट्र का ऐसा वफ़ादार (निष्ठावान) कह सकते हैं जिसकी दृष्टि कभी सत्य और असत्य पर नहीं होती, बल्कि अपने राष्ट्र के लाभ और हानि पर होती है । अगर वह अपने इस संकुचित दृष्टिकोण को बदल दे और प्रत्येक वर्ग और प्रत्येक समूह का कल्याण चाहने लगे तो वह मानवतावादी होगा, राष्ट्रभक्त नहीं होगा ।

राष्ट्रवाद की दूसरी बुराई यह है कि वह सारे मनुष्यों को एक दृष्टि से नहीं देखता, बल्कि उनके बीच ऊँच-नीच के असंख्य मापदण्ड स्थापित कर देता है । कभी किसी राष्ट्र को वह इसलिए श्रेष्ठ मानता है कि सत्ता और शासन उसके हाथ में है और कभी उसके निकट कोई राष्ट्र इसलिए ऊँचा हो जाता है कि वह एक विशिष्ट भाषा बोलता है या उसका किसी विशेष वंश या विशेष भू-भाग से सम्बन्ध है । स्पष्ट है जहाँ यह बुराई होगी वहाँ आप मानवीय समानता की कल्पना नहीं कर सकते ।

वर्तमान युग राष्ट्रवाद का युग है । यही कारण है कि इसमें ये दोनों बुराइयाँ पूर्ण रूप से उभर चुकी हैं । एक ओर राष्ट्रीय पक्षपात पूरी शक्ति के साथ उभर आया है और दूसरी ओर आज का मानव समानता की भावना को त्याग चुका है । अतएव इसी का परिणाम है कि कोई भी सत्ताधारी राष्ट्र अपने अधीन किसी शासित राष्ट्र को जीने का अधिकार तक देने के लिए तैयार नहीं है । वह उनकी प्रगति एवं संपन्नता का शत्रु है और हर क़दम पर उनके मार्ग में काँटे बिछाता है । इन परिणामों के स्पष्ट प्रकट होने के पश्चात् कौन कह सकता है कि मानवता का कल्याण राष्ट्रवाद के सिद्धान्त में है और इससे विश्व को सुख-शांति और संतुष्टि मिल सकती है ।

सीमित उद्देश्यों से शत्रुता पैदा होती है

वास्तविकता यह है कि इन ग़लत उद्देश्यों ने मानव-जाति रूपी परिवार में फूट डाल दी है और उनके बीच घृणा एवं शत्रुता के बीज बो दिए हैं । प्रत्येक व्यक्ति अपने आवरण में बन्द होकर सोचता है और दूसरों की समस्याओं और कठिनाइयों से उसे रुचि नहीं रही है । सत्य हो या असत्य अपने वर्ग और अपने गिरोह के पक्षधर होने को अनिवार्य समझा जाता है । अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध तक हितों के अधीन हो गए हैं । अपने राष्ट्र के लाभ के लिए दूसरे राष्ट्रों को क्षति पहुँचाने में भी संकोच नहीं किया जाता । सम्प्रदाय दूसरे सम्प्रदायों से टकरा रहे हैं और राष्ट्र दूसरे राष्ट्रों से संघर्षरत हैं । मानव-जाति सुख-शांति से दूर और बहुत दूर होती जा रही है । युद्ध के काले बादल चारों ओर मंडला रहे हैं । मनुष्य स्थायी रूप से भय के साये में जी रहा है क्योंकि उसे मालूम नहीं कब उससे आग बरसने लगे और आबादियाँ निर्जन प्रांतों और क़ब्रिस्तानों में परिवर्तित हो जाएँ ।

विश्व बन्धुत्व की धारणा और उसकी निर्बलता

इस (उपर्युक्त समस्या) के समाधान के लिए विश्व बन्धुत्व की धारणा प्रस्तुत की जाती है । अर्थात् सभी राष्ट्र अपने सामान्य हितों में एकजुट हो जाएँ और उनकी प्राप्ति के लिए मिल-जुल कर संघर्ष करें । स्वयं भी जीवित रहें और दूसरों को भी जीवित रहने का अधिकार दें । लेकिन यह एक काल्पनिक धारणा है । विश्व के घटना-चक्र ने अभी तक इसका समर्थन नहीं किया है । मनुष्य के सारे निर्णय और सारी चेष्टाएँ उसके सिद्धान्तों के अधीन होती हैं । सिद्धान्तों ही के आधार पर युद्ध एवं शांति, मित्रता और शत्रुता होती है । इन्हीं सिद्धान्तों के कारण सम्पर्कों एवं सम्बन्धों में स्थायित्व या दुर्बलता आती है । सिद्धान्तों में परस्पर असंगति हो तो मतभेद अनिवार्यतः उत्पन्न होंगे । जो व्यक्ति साम्यवाद में विश्वास रखता हो पूँजीवाद की ओर समझौता का हाथ बढ़ाना उसके लिए असम्भव है । राष्ट्र-भक्त की मानसिकता राष्ट्रवाद के विरोध को सहन नहीं कर सकती । वैचारिक अन्तर्विरोध का इतिहास बताता है कि इससे मनुष्यों के बीच हमेशा वैमनस्य और युद्ध रहा है । यह कैसे सम्भव है कि आज यही चीज़ प्रेम एवं सौहार्द का साधन बन जाए ? यह एक ऐसा स्वाभाविक प्रश्न है जिसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती, और विश्व बन्धुत्व की धारणा प्रस्तुत करनेवालों की ओर से अब तक इसका उत्तर नहीं दिया जा सका है ।

मानव-एकता के इस्लामी आधार

इस्लाम ने मानव-एकता की विस्तृत, सार्वभौमिक और स्पष्ट धारणा प्रस्तुत की है और इसके लिए बहुत ही ठोस और मज़बूत आधार स्थापित किए हैं । उसके निकट इसका पहला आधार यह है कि सारे मानव एक ईश्वर की सृष्टि और उसके बन्दे (दास) हैं । दूसरा आधार यह है कि उन सबका मूल एक है, इसलिए वह अपने समस्त बाह्य अन्तरों के बावजूद एक इकाई है । इस्लाम इन आधारों पर समस्त मानव-जाति के सभी वर्गों को जोड़ता और इस मार्ग में जो संकीर्णताएँ (पक्षपात) बाधक हैं उनको एक-एक करके दूर करता है । इस्लाम द्वारा प्रदत्त इन आधारों को मान लिया जाए तो मतभेदों के अंधेरे से एकता के सूर्य का उदय हो सकता है और जो राष्ट्र एवं समूह परस्पर संघर्षरत हैं वे मिल-जुल कर जीवन-यापन कर सकते हैं ।

सारे मनुष्य एक ईश्वर के बन्दे हैं

इस्लाम ने ईश्वर की अत्यन्त उचित एवं सटीक धारणा दी है । यही उसकी शिक्षाओं का मूलमंत्र है । वह इस तथ्य को सशक्त प्रमाणों के साथ प्रस्तुत करता है कि यह विशाल ब्रह्माण्ड, जिसके विस्तार का अनुमान नहीं लगाया जा सकता, एक ही ईश्वर की सृष्टि है । उसी का इस पर शासन है । मनुष्य भी उसकी असंख्य सृष्टियों की तरह एक सृष्टि है । वही उसका स्रष्टा, स्वामी, उपास्य और शासक है । उसी ने उसके लिए हवा, पानी, प्रकाश, अंधकार, गर्मी और ठण्डक पैदा की, ज़ल और थल पर उसे अधिकार दिए, वही उसका अन्नदाता और पालनहार है, उसी के हाथ में मृत्यु एवं जीवन, बीमारी एवं स्वास्थ्य और विपन्नता और सम्पन्नता है । वही उसकी विनती सुनता और मनोरथ पूरा करता है, वही संकट दूर करनेवाला और आवश्यकताएँ पूरी करनेवाला है । वही उसका वास्तविक सहारा है । जब सारे सहारे टूट जाते हैं तो उसी का सहारा काम आता है, वही शरणदाता है, वह शरण न दे तो उसे कहीं शरण नहीं मिल सकती और वह सहायता न करे तो कोई उसकी सहायता नहीं कर सकता । उसके उपकार इतने अधिक हैं और मनुष्य उन उपकारों में इतना डूबा हुआ है कि वह न तो उनको गिन सकता है और न उनका सही अर्थ में कृतज्ञता ज्ञापित कर सकता है । क़ुरआन में है :

اَللّٰهُ الَّذِىْ خَلَقَ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضَ وَاَنْزَلَ مِنَ السَّمَآءِ مَآءً
فَاَخْرَجَ بِهٖ مِنَ الثَّمَرٰتِ رِزْقًا لَّكُمْ وَسَخَّرَ لَكُمُ الْفُلْكَ لِتَجْرِىَ

فِي الْبَحْرِ بِأَمْرِهٖ ۚ وَسَخَّرَ لَكُمُ الْاَنْهٰرَ ۝ وَسَخَّرَ لَكُمُ الشَّمْسَ وَ
الْقَمَرَ دَآئِبَيْنِ ۚ وَسَخَّرَ لَكُمُ الَّيْلَ وَالنَّهَارَ ۝ وَاٰتٰىكُمْ مِّنْ كُلِّ مَا
سَاَلْتُمُوْهُ ؕ وَاِنْ تَعُدُّوْا نِعْمَتَ اللّٰهِ لَا تُحْصُوْهَا ؕ اِنَّ الْاِنْسَانَ لَظَلُوْمٌ
كَفَّارٌ ۝ (ابراهيم : ٣٢-٣٤)

"अल्लाह वही है जिसने आकाशों और धरती को पैदा किया और आकाश से पानी बरसाया, फिर उसके द्वारा तुम्हारी रोज़ी (आजीविका) के लिए तरह-तरह के फल पैदा किए। जिसने नौका को तुम्हारे लिए वशीभूत किया कि समुद्र में उसके आदेश से चले और दरियाओं को तुम्हारे लिए वशवर्ती किया। जिसने सूरज और चाँद को तुम्हारे लिए वशवर्ती किया कि निरन्तर चले जा रहे हैं और रात-दिन को तुम्हारे लिए वशवर्ती किया। जिसने वह सब कुछ तुम्हें दिया जो तुमने माँगा (अर्थात् जिन चीज़ों की तुम्हारे अस्तित्व एवं विकास के लिए आवश्यकता थी, वह सब दिया)। यदि तुम अल्लाह की नेमतों की गणना करना चाहो तो नहीं कर सकते। वास्तविकता यह है कि मानव बड़ा ही अन्यायी और अकृतज्ञ है।"

(क़ुरआन—14:32-34)

सबका जीवन लक्ष्य ईश्वर की उपासना है।

मनुष्य अपने उसी मालिक व प्रभु की उपासना के लिए पैदा हुआ है। इस संसार में यही उसकी सही हैसियत भी है और यही उसके लिए उचित और शोभनीय भी है। इसी के द्वारा वह अल्लाह के उपकारों का शुक्र अदा कर सकता है और अपने बन्दा होने का प्रमाण दे सकता है। क़ुरआन में है :

يٰۤاَيُّهَا النَّاسُ اعْبُدُوْا رَبَّكُمُ الَّذِيْ خَلَقَكُمْ وَالَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِكُمْ
لَعَلَّكُمْ تَتَّقُوْنَ ۝ الَّذِيْ جَعَلَ لَكُمُ الْاَرْضَ فِرَاشًا وَّالسَّمَآءَ بِنَآءً ۖ وَّ
اَنْزَلَ مِنَ السَّمَآءِ مَآءً فَاَخْرَجَ بِهٖ مِنَ الثَّمَرٰتِ رِزْقًا لَّكُمْ ۚ فَلَا تَجْعَلُوْا
لِلّٰهِ اَنْدَادًا وَّاَنْتُمْ تَعْلَمُوْنَ ۝ (البقرہ: ٢١-٢٢)

"ऐ लोगो! बन्दगी करो, अपने उस प्रभुवर (रब) की जो तुम्हारा और

तुमसे पहले जो लोग हुए हैं उन सबका पैदा करनेवाला है, तुम्हारे बचने की आशा इसी प्रकार हो सकती है । वही तो है जिसने तुम्हारे लिए धरती का बिछौना बिछाया, आकाश की छत बनाई, ऊपर से पानी बरसाया और उसके द्वारा हर प्रकार की पैदावार निकालकर तुम्हारे लिए रोज़ी जुटाई । अतः जब यह तुम जानते हो तो दूसरों को अल्लाह का प्रतिद्वन्द्वी न ठहराओ ।''

(क़ुरआन—2:21-22)

यही पैग़म्बरों की शिक्षा है

यही शिक्षा उन समस्त पैग़म्बरों और महापुरुषों की थी जो अल्लाह तआला की ओर से मनुष्यों के मार्ग-दर्शन के लिए संसार के विभिन्न भागों में और विभिन्न युगों में आते रहे और जिसका सिलसिला आख़िरी रसूल मुहम्मद (सल्ल०) तक जारी रहा । क़ुरआन कहता है :

وَمَآ اَرْسَلْنَا مِنْ قَبْلِكَ مِنْ رَّسُوْلٍ اِلَّا نُوْحِيْٓ اِلَيْهِ اَنَّهٗ لَآ اِلٰهَ اِلَّآ اَنَا فَاعْبُدُوْنِ ۝ (الانبیاء : ۲۵)

''हमने तुमसे पहले जो रसूल भी भेजा है उसकी ओर यही प्रकाशना की है कि मेरे सिवा कोई इष्ट पूज्य नहीं है । अतः तुम लोग मेरी ही बन्दगी करो ।''

क़ुरआन—21:25

इस उद्देश्य पर सब एकत्र हो सकते हैं

जीवन का यह उद्देश्य किसी एक व्यक्ति, वर्ग और क़ौम एवं देश का नहीं, बल्कि सारी मानव-जाति का उद्देश्य है—अमीर का भी, ग़रीब का भी, विकसित का भी, पिछड़े और विकासशील का भी, हिन्दुस्तानी का भी, चीनी का भी, एशियावाले का भी, यूरोपवाले का भी, रूसी का भी, अमरीकी का भी । अल्लाह तआला ने व्यक्तियों और समूहों के लिए अलग-अलग उद्देश्य नहीं बताए हैं, बल्कि सबका एक उद्देश्य निश्चित किया है और धरती पर बसनेवाले प्रत्येक व्यक्ति और प्रत्येक समूह के लिए अपनी इबादत अनिवार्य की है ।

यही संसार का एकमात्र उद्देश्य है जो पूरब-पश्चिम, और उत्तर-दक्षिण के सभी मनुष्यों का उद्देश्य हो सकता है और जिस पर रंग एवं नस्ल और राष्ट्र एवं देश की विविधता के बावजूद वे एकत्र हो सकते हैं । इस (उद्देश्य) के विषय में न तो अरब से बाहरवाले यह कह सकते हैं कि यह केवल अरबों के लिए है और

न अरबवासी इसे अरब से बाहरवालों का उद्देश्य निश्चित कर सकते हैं । न पूरब वाले इससे दूरी महसूस कर सकते हैं और न पश्चिम वाले क्योंकि यह हर मानव के दिल की पुकार है । इससे उसकी स्वाभाविक प्यास बुझती है और आत्मतुष्टि प्राप्त होती है । इसमें प्रत्येक वर्ण एवं जाति और प्रत्येक भू-भाग के मनुष्यों के लिए आकर्षण है । अपने स्रष्टा एवं स्वामी और उपकारी की ओर बढ़ना और उससे निकट होना मानव की प्रकृति एवं स्वभाव है । क्योंकि क़दम-क़दम पर वह उसकी ओर उन्मुख होने और उसकी छत्रछाया में शरण लेने पर विवश है । संकटों में वह उसका सहारा ढूँढ़ता है और आनन्द एवं उल्लास में उसके उपकारों पर कृतज्ञता प्रकट करना चाहता है, उसकी उपासना और बन्दगी में मानव का अपना निजी हित है और उससे विद्रोह और उसकी अवज्ञा में उसकी अपनी निजी हानि ।

इसके अतिरिक्त ईश्वर की कोई जाति नहीं, उसका कोई परिवार और वंश नहीं । उसका अस्तित्व किसी निश्चित भू-भाग में सीमित नहीं । वह सर्वव्यापी है और प्रत्येक को देखता और उसकी विनती सुनता और सहायता करता है । उससे प्रत्येक मनुष्य अपना सम्बन्ध जोड़ सकता है—गोरे भी, काले भी, मज़दूर भी, मालिक भी, किसान भी, व्यापारी भी, विद्यार्थी भी, अध्यापक भी, शासक भी, शासित भी । सब उसकी दृष्टि में समान हैं । सब उसकी ओर बढ़ सकते हैं और उससे निकटता एवं प्रेम की कामना कर सकते हैं । कोई व्यक्ति न तो अपनी कुलीनता से उसके पास ऊँचा स्थान प्राप्त कर सकता है और न पद एवं प्रतिष्ठा से । उस तक पहुँचने में न तो दरिद्रता बाधक बनती है और न सुख-वैभव सहायक होता है । वह प्रत्येक उस व्यक्ति को आगे बढ़कर लेने के लिए तैयार है जो उसकी ओर बढ़े, चाहे वह अफ़्रीक़ा का हो या अमरीका का, अंग्रेज़ी बोलता हो या हिन्दी, जो व्यक्ति अपने आप को उसकी दासता में देना चाहे उसके लिए कोई रुकावट नहीं है । जिस कोने से जो भी उसे पुकारे उसकी पुकार का जवाब देने के लिए वह तैयार है । क़ुरआन कहता है :

وَإِذَا سَأَلَكَ عِبَادِي عَنِّي فَإِنِّي قَرِيبٌ ۖ أُجِيبُ دَعْوَةَ الدَّاعِ إِذَا دَعَانِ ۖ فَلْيَسْتَجِيبُوا لِي وَلْيُؤْمِنُوا بِي لَعَلَّهُمْ يَرْشُدُونَ ۝

(البقرہ : ۱۸۶)

"और ऐ नबी, मेरे बन्दे यदि तुमसे मुझे (मेरे विषय में) पूछें, तो उन्हें बता दो कि मैं उनसे निकट ही हूँ । पुकारनेवाला जब मुझे पुकारता है, मैं उसकी पुकार सुनता और उत्तर देता हूँ । अतः उन्हें चाहिए कि मेरी पुकार पर कहें कि हम उपस्थित हैं और मुझको मानें । (यह बात तुम

उन्हें सुना दो) कदाचित वे सीधा मार्ग पा लें।"(क़ुरआन—2:186)

यह कल्पना कि इस ब्रह्माण्ड का एक ईश्वर है, सारे मनुष्य उसके बन्दे हैं और उसी की उपासना (इबादत) के लिए पैदा हुए हैं, मानव के बीच भेदभाव को समाप्त करके उनको एक इकाई में परिवर्तित कर देता है। इसको मानने के पश्चात मनुष्य के अन्दर सम्मान और अपमान के झूठे भेद-भाव कभी उभर नहीं सकते। ईश्वर की बन्दगी का एहसास सेवक एवं स्वामी, शासक एवं शासित, मज़दूर एवं मालिक, गोरे और काले, अरबी और अजमी (ग़ैर-अरबी) सबको एक पंक्ति में खड़ा कर देता है और ऊँच-नीच के अन्तर को भूलकर सब उसके सामने नतमस्तक हो जाते हैं।

मानव-जाति का मूल एक है

क़ुरआन मजीद ने बार-बार इस वास्तविकता पर प्रकाश डाला है कि मानव-जाति का आरम्भ एक ही जीवन से हुआ है। उसी से उसका जोड़ा बनाया गया और फिर उन दोनों से उनकी नस्ल फैली। परिवार और गोत्र अस्तित्व में आए। राष्ट्रों और समूहों ने जन्म लिया और इंसानी आबादी धरती के विभिन्न भागों और क्षेत्रों में फैलती चली गई। अतएव एक स्थान पर उल्लेख हुआ :

يَا أَيُّهَا النَّاسُ اتَّقُوا رَبَّكُمُ الَّذِي خَلَقَكُم مِّن نَّفْسٍ وَاحِدَةٍ
وَخَلَقَ مِنْهَا زَوْجَهَا وَبَثَّ مِنْهُمَا رِجَالًا كَثِيرًا وَنِسَاءً ۚ وَاتَّقُوا اللَّهَ
الَّذِي تَسَاءَلُونَ بِهِ وَالْأَرْحَامَ ۚ إِنَّ اللَّهَ كَانَ عَلَيْكُمْ رَقِيبًا ①

(النساء : ١)

"ऐ लोगो, अपने प्रभु से डरो जिसने तुमको एक जीव से पैदा किया और उसी से उसका जोड़ा बनाया और उन दोनों से बहुत-से पुरुष और स्त्री संसार में फैला दिए। उस अल्लाह से डरो जिसको माध्यम बनाकर तुम एक-दूसरे से अपने हक़ माँगते हो, और नाते-रिश्तों के सम्बन्धों को बिगाड़ने से बचो। निश्चय ही अल्लाह तुम्हें देख रहा है।"

(क़ुरआन—4:1)

मानव-जाति की एकता को भंग करना बिगाड़ है

यह इस बात की घोषणा है कि सारे मनुष्य वास्तव में एक ही माँ-बाप की संतान हैं। वे एक-दूसरे के भाई हैं जो संसार के एक भाग से दूसरे भाग तक

फैले हुए हैं । अल्लाह तआला ने उनके बीच बन्धुत्व और भाईचारा का जो सम्बन्ध स्थापित कर दिया है उसे तोड़ने की इस्लाम हरगिज़ अनुमति नहीं देता और इस दिशा में जो भी क़दम उठाया जाए उसका विरोध करता है । उसके निकट इस परिवार को उजाड़ने और क्षति पहुँचाने की प्रत्येक कोशिश बिगाड़ और उपद्रव के समान है । क़ुरआन ने हज़रत मूसा (अलै०) और फ़िरऔन के वृत्तांत का बहुत विस्तार से वर्णन किया है । फ़िरऔन ने अल्लाह से विद्रोह और अवज्ञा का तरीक़ा अपनाया और पूरी क़ौम (राष्ट्र) को वर्गों में विभाजित कर दिया । एक वर्ग शासक था और दूसरा शासित । अल्लाह तआला ने हज़रत मूसा (अलै०) के द्वारा इस विद्रोह को समाप्त किया, पीड़ितों एवं दलितों की सहायता की और अत्याचारियों को भूतल से मिटा दिया । उल्लेख है :

إِنَّ فِرْعَوْنَ عَلَا فِي الْأَرْضِ وَجَعَلَ أَهْلَهَا شِيَعًا يَسْتَضْعِفُ طَائِفَةً مِّنْهُمْ يُذَبِّحُ أَبْنَاءَهُمْ وَيَسْتَحْيِي نِسَاءَهُمْ ۚ إِنَّهُ كَانَ مِنَ الْمُفْسِدِينَ ۝ وَنُرِيدُ أَن نَّمُنَّ عَلَى الَّذِينَ اسْتُضْعِفُوا فِي الْأَرْضِ وَنَجْعَلَهُمْ أَئِمَّةً وَنَجْعَلَهُمُ الْوَارِثِينَ ۝ وَنُمَكِّنَ لَهُمْ فِي الْأَرْضِ وَنُرِيَ فِرْعَوْنَ وَهَامَانَ وَجُنُودَهُمَا مِنْهُم مَّا كَانُوا يَحْذَرُونَ ۝ (القصص: ٤-٦)

"वास्तविकता यह है कि फ़िरऔन ने धरती में सिर उठाया और उसके निवासियों को गिरोहों में विभक्त कर दिया । उनमें से एक गिरोह को वह अपमानित और कमज़ोर बनाकर रखता था, उसके बेटों की हत्या करता और उसकी बेटियों को जीता रहने देता था । वास्तव में वह बिगाड़ पैदा करनेवाले लोगों में से था । और हम यह इरादा रखते थे कि दया करें उन लोगों पर जो धरती में अपमानित और कमज़ोर बनाकर रखे गए थे और उन्हें नायक बना दें और उन ही को वारिस बनाएँ और धरती में उनको प्रभुत्व प्रदान करें और उनसे फ़िरऔन और हामान और उनकी सेनाओं को वही कुछ दिखलाएँ जिनका उन्हें डर था ।"

(क़ुरआन—28:4-6)

वर्ण, वंश और भाषा आदि की भिन्नता प्रकृति की निशानियाँ हैं

मनुष्यों के बीच रंग-रूप, वंश एवं गोत्र, भाषा, रहन-सहन, उद्योग-धन्धा, और

राष्ट्रीयता एवं क्षेत्रीयता के अन्तर को इस्लाम ईश्वर की असंख्य निशानियों में से एक निशानी बताता है । मनुष्यों का यह अन्तर बताता है कि इस विश्व पर उसके स्रष्टा एवं प्रभु को पूरा-पूरा आधिपत्य एवं अधिकार प्राप्त है । वह जिसे चाहता है सुन्दर पैदा करता है और जिसे चाहता है कुरूप बनाता है, जिसे चाहता है धन-दौलत देता है और जिसे चाहता है इससे वंचित कर देता है । जिसको जिस भू-भाग में चाहे पैदा करता है और जो बोली चाहे सिखाता है । अगर कोई व्यक्ति इनमें से किसी चीज़ को अपनी श्रेष्ठता या हीनता का प्रमाण समझता है तो वह प्रकृति की एक बहुत बड़ी निशानी से शिक्षा नहीं प्राप्त कर रहा है । वह उस दृष्टि से वंचित है जिसमें ईश्वर के प्रमाणों का अवलोकन एवं अध्ययन करने की क्षमता होती है ।

وَمِنْ اٰيٰتِهٖٓ اَنْ خَلَقَكُمْ مِّنْ تُرَابٍ ثُمَّ اِذَآ اَنْتُمْ بَشَرٌ تَنْتَشِرُوْنَ ۝
وَمِنْ اٰيٰتِهٖٓ اَنْ خَلَقَ لَكُمْ مِّنْ اَنْفُسِكُمْ اَزْوَاجًا لِّتَسْكُنُوْٓا اِلَيْهَا
وَجَعَلَ بَيْنَكُمْ مَّوَدَّةً وَّرَحْمَةً ؕ اِنَّ فِيْ ذٰلِكَ لَاٰيٰتٍ لِّقَوْمٍ يَّتَفَكَّرُوْنَ ۝
وَمِنْ اٰيٰتِهٖ خَلْقُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ وَاخْتِلَافُ اَلْسِنَتِكُمْ وَاَلْوَانِكُمْ ؕ
اِنَّ فِيْ ذٰلِكَ لَاٰيٰتٍ لِّلْعٰلِمِيْنَ ۝ وَمِنْ اٰيٰتِهٖ مَنَامُكُمْ بِالَّيْلِ وَالنَّهَارِ
وَابْتِغَآؤُكُمْ مِّنْ فَضْلِهٖ ؕ اِنَّ فِيْ ذٰلِكَ لَاٰيٰتٍ لِّقَوْمٍ يَّسْمَعُوْنَ ۝

(الروم : ۲۰-۲۳)

"उसकी निशानियों में से यह है कि उसने तुमको मिट्टी से पैदा किया । फिर सहसा तुम मानव हो कि (धरती में) फैलते चले जा रहे हो । और उसकी निशानियों में से यह है कि उसने तुम्हारे लिए तुम्हारी ही जाति से जोड़े बनाए ताकि तुम उनके पास शान्ति प्राप्त करो और तुम्हारे बीच प्रेम और दयालुता पैदा कर दी । निस्संदेह इसमें बहुत-सी निशानियाँ हैं उन लोगों के लिए जो सोच-विचार करते हैं ।

और उसकी निशानियों में से आकाश और धरती की सृष्टि, और तुम्हारी भाषाओं और तुम्हारे रंगों की भिन्नता है । निश्चय ही इसमें बहुत-सी निशानियाँ हैं बुद्धिमान लोगों के लिए ।

और उसकी निशानियों में से तुम्हारा रात का सोना और दिन में तुम्हारा

उसके अनुग्रह (आजीविका) को तलाश करना है । निश्चय ही इसमें बहुत-सी निशानियाँ हैं उन लोगों के लिए जो (ध्यानपूर्वक) सुनते हैं ।"

(क़ुरआन—30:20–23)

क़ुरआन की इन आयतों में कुछ महत्त्वपूर्ण तथ्यों का विवेचन हुआ है :

(1) अल्लाह तआला ने मनुष्य को मिट्टी से पैदा किया, इस कथन से मनुष्य के राष्ट्रीय, वांशिक, आर्थिक, बौद्धिक श्रेष्ठता मूलक प्रत्येक प्रकार के अहंकार को तोड़ दिया गया है । इंसान चाहे किसी देश का राजा हो, किसी सत्तारूढ़ राष्ट्र और वंश से सम्बन्ध रखता हो, बड़े-से-बड़ा पूँजीपति और उद्योगपति हो, ज्ञान-विज्ञान और शक्ति एवं सामर्थ्य में उच्चता एवं श्रेष्ठता उसे प्राप्त हो, यह वास्तविकता है कि वह मिट्टी से पैदा हुआ है । मिट्टी की विशेषता विनम्रता है, मिट्टी के इस पुतले में अहंकार उसी स्थिति में पैदा हो सकता है जबकि वह अपनी वास्तविकता को न समझे और अपनी हैसियत को भूल जाए ।

(2) संसार ने स्त्री और पुरुष को भी हीनता और श्रेष्ठता की श्रेणियों में विभाजित कर दिया था । पुरुष श्रेष्ठ था और स्त्री हीन थी । आज भी यह विभाजन व्यावहारिक रूप में वर्तमान है । क़ुरआन के इस वर्णन से कि अल्लाह ने पुरुष का जोड़ा उसी की जाति से पैदा किया, इस निरर्थक विभाजन का खण्डन होता है । पुरुष का जोड़ा उसी की जाति से है किसी और जाति से नहीं है, इसलिए उनमें से किसी की हीनता या श्रेष्ठता का प्रश्न ही व्यर्थ है । अल्लाह ने उनके बीच प्रेम एवं सौहार्द रखा है । उनके बीच घृणा या शत्रुता का पैदा करना या पाया जाना बिल्कुल अप्राकृतिक है ।

(3) कहा गया (अल्लाह की निशानियों में से एक निशानी आकाश और धरती का पैदा करना भी है) प्रकृति की निशानी से कोई व्यक्ति इनकार नहीं कर सकता । इसमें इस बात की ओर भी सूक्ष्म संकेत है कि लाखों मील की दूरी के बावजूद अल्लाह के आदेश ने धरती और आकाश के बीच तारतम्य पैदा कर दिया है । वह बिना किसी टकराव के ईश्वर के बनाए हुए विधान के अन्तर्गत भ्रमण कर रहे हैं । यदि इस धरती के मनुष्य भी उसके आदेशों के पाबन्द हो जाएँ तो उनके सारे झगड़े और वैमनस्य समाप्त हो सकते हैं और उनके बीच एकता पैदा हो सकती है ।

(4) रंग-रूप और भाषा के अन्तर को भी प्रकृति की एक निशानी घोषित किया । स्पष्ट है प्रकृति की निशानियाँ शिक्षा प्राप्त करने के लिए होती हैं, लड़ने-झगड़ने के लिए नहीं ।

(5) इस संसार में प्रत्येक व्यक्ति सोने, जागने और आर्थिक दौड़-धूप करने पर विवश है । यह भी प्रकृति की एक निशानी है जो बताती है कि संसार का कोई भी मनुष्य आवश्यकताओं से बेपरवाह और अछूता नहीं है और इन आवश्यकताओं का स्वरूप भी समान है । जब आवश्यकताओं ने सबको एक कर दिया है तो उनके बीच हीनता और श्रेष्ठता का प्रश्न ही निरर्थक है ।

इन वास्तविकताओं की ओर क़ुरआन ने दूसरे स्थानों पर भी, कहीं विस्तार से और कहीं संक्षेप में ध्यान दिलाया है । यदि मनुष्य ठण्डे दिल से इनपर विचार करे तो मानव-जाति को उसके सारे मतभेदों के बावजूद एक इकाई मानने पर विवश होगा ।

प्रतिष्ठा का मानदण्ड केवल ईशपरायणता है

मनुष्य का दुर्भाग्य यह है कि उसने वर्ण एवं वंश, परिवार एवं गोत्र, राष्ट्र एवं देश और भाषा एवं शैली के अन्तर को प्रकृति की निशानियाँ समझकर उनसे शिक्षा ग्रहण नहीं की । बल्कि उन्हें सम्मान एवं अपमान और उच्चता एवं निम्नता का मानदण्ड बना लिया । हालाँकि सम्मान एवं अपमान का सम्बन्ध रंग-रूप, रहन-सहन और बोल-चाल से नहीं है बल्कि ईमान व अमल (धारणा एवं व्यवहार) से है । जो व्यक्ति अपने आपको ईश्वर का बन्दा (दास) सिद्ध करे, उसकी अवज्ञा से डरकर जीवन व्यतीत करे और उसका कृपापात्र बनने की चेष्टा करे वही सम्मानित और सज्जन है । जो व्यक्ति इन गुणों से रिक्त है उसके लिए ईश्वर के यहाँ सम्मान का कोई स्थान नहीं है । चाहे दुनियावालों की दृष्टि में उसका स्थान कितना ही ऊँचा क्यों न हो । क़ुरआन ने अत्यन्त स्पष्ट शब्दों में कहा है :

يَاَيُّهَا النَّاسُ اِنَّا خَلَقْنٰكُمْ مِّنْ ذَكَرٍ وَّ اُنْثٰى وَجَعَلْنٰكُمْ شُعُوْبًا
وَّ قَبَآئِلَ لِتَعَارَفُوْا ؕ اِنَّ اَكْرَمَكُمْ عِنْدَ اللّٰهِ اَتْقٰكُمْ ؕ اِنَّ
اللّٰهَ عَلِيْمٌ خَبِيْرٌ ۝ (الحجرات : ١٣)

"ऐ लोगो, हमने तुमको एक पुरुष और एक स्त्री से पैदा किया और फिर तुम्हारी जातियाँ और बिरादरियाँ बना दी, ताकि तुम एक-दूसरे को पहचानो । वास्तव में अल्लाह की दृष्टि में तुममें सबसे ज़्यादा प्रतिष्ठित वह व्यक्ति है जो तुम में सबसे अधिक परहेज़गार है । निश्चय ही अल्लाह सब कुछ जाननेवाला और ख़बर रखनेवाला है । (क़ुरआन—49:13)

क़ुरआन की इस आयत ने सम्मान एवं अपमान के सारे झूठे मापदण्ड समाप्त कर दिए। इसमें स्पष्टतः यह घोषणा की गई है कि जन्म के आधार पर किसी को किसी प्रकार की कोई श्रेष्ठता एवं उच्चता प्राप्त नहीं है। यहाँ न कोई माँ के पेट से पाप मुक्त पैदा होता है और न पापों की गठरी अपने सिर पर लाद कर आता है, न उसके हाथ में श्रेष्ठता का प्रमाणपत्र होता है और न हीनता का आदेशपत्र। इंसान की बड़ाई और श्रेष्ठता उसकी नेकी और ईशपरायणता से संलग्न है। ईश्वर के दरबार में वंश और कुल तथा परिवार एवं गोत्र का नहीं बल्कि तक़्वा (ईशपरायणता) का प्रश्न होगा। जिनके दिलों में तक़्वा होगा वही उसके (ईश्वर के) पुरस्कार एवं सम्मान के अधिकारी होंगे। जिनके जीवन ईश्वर के भय से ख़ाली होंगे और उन्हें ईश्वर की पकड़ से कोई चीज़ बचा न सकेगी।

अशुद्ध मानदण्डों का सुधार

संसार के विभिन्न राष्ट्रों और वंशों ने सम्मान एवं अपमान के जो झूठे मानदण्ड स्थापित कर रखे थे, उनमें से एक-एक को अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने जड़-मूल से उखाड़ फेंका और पूरी मानव-जाति के लिए केवल ईशपरायणता और विनयशीलता को सम्मान का मानदण्ड घोषित किया।

राष्ट्रीय एवं जातीय अहंकार की आलोचना

राष्ट्रीय एवं जातीय अहंकार ने हमेशा दूसरे राष्ट्रों और दूसरी जातिवालों को समानता का पद देने से इनकार किया और उनके साथ समता के व्यवहार की अनुमति नहीं दी। अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने अपने अन्तिम हज के अवसर पर जो अनुपम भाषण दिया था उसमें इस पर प्रबल प्रहार किया और मानव एकता की घोषणा की। आप (सल्ल०) ने ऐलान किया :

يَاأَيُّهَا الناس أَلا ان ربكم واحد وان اباكم واحد
الا لا فضل لعربي على عجمي ولا لعجمي على عربي ولا لاحمر
على اسود ولا لاسود على احمر الا بالتقوىٰ۔

(مسند احمد ۵: ۴۱۱)

"ऐ लोगो, सुन लो ! निस्संदेह तुम्हारा प्रभु एक है और तुम्हारा बाप (भी) एक है । सुन लो, किसी अरबी को अजमी (ग़ैर-अरब) पर, किसी अजमी को किसी अरबी पर, किसी गोरे को काले पर, और किसी काले को गोरे पर सिवाए तक़वा (ईशपरायणता) के और किसी आधार पर कोई श्रेष्ठता नहीं है (अर्थात् जिसके अन्दर जितना ईशमय होगा उतना ही वह श्रेष्ठ व्यक्ति होगा)"

(मुसनद अहमद— 5/411)

अंतिम हज (हज्जतुल विदा) के अवसर पर पूरा हिजाज़ (मक्का और मदीना के बीच का भू-भाग) आपके अधीन था । आपका सम्बन्ध भी अरब से था और आपके सभी साथी भी अरब ही से सम्बन्ध रखते थे, अतः अरबों के अन्दर अपनी श्रेष्ठता और उच्चता का एहसास पैदा हो सकता था । आपने इस एहसास को पैदा होने नहीं दिया और बताया कि सारे इनसान एक ईश्वर के बन्दे (दास) और एक बाप की संतान हैं । उनमें श्रेष्ठता उस व्यक्ति को प्राप्त है जो ईशपरायण और परहेज़गार है ।

अपने एक साथी हज़रत अबूज़र (रज़ि०) से आपने (सल्ल०) यही बात इस प्रकार कही :

انظر انك لست بخير من احمر ولا اسود الا ان
تفضله بالتقوىٰ (مسند احمد: ٥/ ١٥٨)

"देखो ! तुम किसी गोरे और काले से श्रेष्ठ नहीं हो, मगर यह कि ईशपरायण में तुम उससे बढ़ जाओ ।" (मुसनद अहमद— 5/158)

पारिवारिक और गिरोही अहंकार की आलोचना

परिवार और गिरोह के अहंकार ने भी मानव-एकता को हानि पहुँचाई है । अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने इससे भी मना किया । हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास (रज़ि०) की रिवायत है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फरमाया :

لاتفتخروا بآبائكم الذين ماتوا في الجاهلية فو
الّذي نفسي بيده لما يدهده الجعل بمنخريه خير
من آبائكم الذين ماتوا في الجاهلية۔

(مسند احمد، تحقیق احمد محمد شاکر: ٤/ ٢٦٠٦١)

"अपने उन बाप, दादाओं पर गर्व मत करो जो अज्ञानता की स्थिति में मर चुके हैं । उस परमसत्ता की क़सम जिसके हाथ में मेरी जान है, गोबर का कीड़ा अपने नथुनों से जिस गन्दगी को लुढ़काता फिरता है वह उत्तम है तुम्हारे उन पूर्वजों से जो अज्ञानता की स्थिति में संसार से चले गए ।" (मुसनद अहमद— 4/260–261)

यह बात अधिक विस्तार से एक दूसरी रिवायत (उल्लेख) में कही गई है । हज़रत अबू हुरैरह (रज़ि०) फ़रमाते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया :

لینتہین اقوام یفتخرون بآبائہم الذین ماتوا انما ہم
فحم جہنم او لیکونن اہون علی اللّٰہ من الجعل
الذی یدہدہ الخراء بانفہ ان اللّٰہ اذہب عنک
عبیۃ الجاہلیۃ وفخرہا بالآباء انما ہو مومن تقی
وفاجر شقی الناس بنو آدم وآدم خلق من التراب

(ترمذی، کتاب المناقب ابوداؤد، کتاب الادب، باب فی التفاخر)

"लोग (अज्ञानकाल में) मरे हुए बाप-दादों पर गर्व करना बिल्कुल छोड़ दें, क्योंकि वे तो जहन्नम (नरक) का कोयला बन चुके हैं । अन्यथा वे अल्लाह के नज़दीक उस गोबर-कीड़े से अधिक अपमानित होंगे जो गन्दगी को अपनी नाक से लुढ़काता फिरता है । अल्लाह तआला ने तुमसे अज्ञानता का घमण्ड और बाप-दादा पर गर्व को दूर कर दिया है । आदमी केवल दो प्रकार के हैं— ईमानवाले और परहेज़गार या दुष्चरित्र और आचारभ्रष्ट । सारे मनुष्य आदम की संतान हैं और आदम मिट्टी से पैदा किए गए थे ।" (तिर्मिज़ी अबू दाऊद,)

हज़रत समुरा बिन जुन्दब (रज़ि०) रिवायत करते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया :

الحسب المال والکرم التقوی

(ترمذی : ابواب التفسیر، سورۃ الحجرات۔ ابن ماجہ ابواب الزہد باب الورع والتقوی)

"हैसियत तो माल है, और बड़ाई एवं श्रेष्ठता तक़वा (ईशपरायणता) से है।" (तिर्मिज़ी, इब्नेमाजा)

वंश और कुल का सम्बन्ध परिवार से है लेकिन संसार की दृष्टि में धन एवं सम्पत्ति का वास्तविक महत्त्व है । जिसके पास सम्पत्ति है उसकी पारिवारिक प्रतिष्ठा भी ऊँची होती है । शराफ़त और बुज़ुर्गी (श्रेष्ठता एवं बड़ाई) एक दूसरी ही चीज़ है । यह तक़वा और परहेज़गारी से पैदा होती है ।

हज़रत अबू हुरैरह (रज़ि०) की रिवायत है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) से पूछा गया कि, 'लोगों में सर्वश्रेष्ठ कौन है ?' आपने जवाब दिया– 'जो उनमें सबसे अधिक ईशपरायण है ।' कहा कि हम एक दूसरी ही बात पूछना चाहते हैं । आपने फ़रमाया, 'तुम पारिवारिक श्रेष्ठता के सम्बन्ध में पूछ रहे हो ? इस दृष्टिकोण से सबसे श्रेष्ठ हज़रत यूसुफ़ (अलै०) हैं । वे स्वयं नबी थे और एक नबी (याक़ूब) के बेटे थे । वे भी एक नबी (इसहाक़) के बेटे थे और वे इबराहीम (अलै०) अल्लाह के मित्र के बेटे थे ।'

इसमें इस बात की ओर संकेत है कि पारिवारिक प्रतिष्ठा भी उसी समय श्रेष्ठता और सम्मान का कारण बनती है जबकि उसमें तक़वा और धर्मपरायणता पाई जाती हो । अल्लाह के पैग़म्बर सबसे अधिक उससे डरनेवाले और नेकी एवं धर्मपरायणता में सबसे आगे होते हैं । हज़रत यूसुफ़ (अलै०) को यह सम्मान प्राप्त है कि वे भी पैग़म्बर थे और उनके ऊपर के तीन बुज़ुर्ग भी ईश्वर के पैग़म्बर थे । सहाबा (रज़ि०) ने कहा— हमारा उद्देश्य यह भी नहीं है । आपने फ़रमाया— 'तो तुम अरब के स्रोतों के विषय में पूछते हो ? इसका उत्तर यह है कि जो अज्ञानता में उत्तम हैं वे इस्लाम में भी उत्तम होंगे, शर्त यह है कि वे इस्लाम की सूझ-बूझ पैदा कर लें ।' (बुख़ारी-किताबुल अंबिया, मुस्लिम-किताबुल फ़ज़ाइल)

इसमें भी आपने अज्ञानता की पारिवारिक श्रेष्ठता के स्थान पर दीन (इस्लाम धर्म) की समझ-बूझ को महत्त्व दिया कि कल जो अपनी विशेषताओं और योग्यताओं एवं क्षमताओं की दृष्टि से उत्तम थे आज भी वही उत्तम होंगे, लेकिन शर्त यह है कि वे दीन का ज्ञान प्राप्त करें और उनके अन्दर उसकी गहरी सूझ-बूझ पैदा हो जाए ।

अपने ख़ानदान (परिवार) पर गर्व भी किया जाता है और दूसरों के ख़ानदान और वंश पर व्यंग्य और हीनभाव भी व्यक्त की जाती हैं हालाँकि न पहली बात सही है और न दूसरी । त्रुटियाँ सबमें होती हैं । कोई इससे मुक्त नहीं होता । पूर्णता केवल ईश्वर की हस्ती को प्राप्त है ।

हज़रत उक़बा बिन आमिर (रज़ि०) की रिवायत है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०)

ने फ़रमाया :

ان انسابکم ھٰذہ لیست بمسبّۃٍ علی احد کلکم بنی آدم طف الصاع لم تملؤہ لیس لاحد علی احد فضل الّا بدین اوتقوٰی وکفٰی بالرجل ان یکون بذیًّا بخیلًا فاحشًا

(مسند احمد ۴/۱۵۸)

"निस्संदेह तुम्हारे ये गोत्र इसलिए नहीं हैं कि इसके द्वारा किसी पर हीनता का आरोप लगाया जाए । तुम सब आदम की संतान हो (सब में अपूर्णता है) जिस प्रकार साअ (पैमाना) की कमी को तुम पूरा किए बिना छोड़ दो । किसी को किसी पर दीन और तक़्वा के अतिरिक्त किसी और कारण से कोई श्रेष्ठता नहीं है । आदमी की बरबादी के लिए उसका अप्रियभाषी , कंजूस और मुँह-फट होना काफ़ी है ।"

(मुसनद अहमद : 4/158)

सम्पत्ति के अभिमान की आलोचना

अमीरी और गरीबी के आधार पर भी मनुष्यों का विभाजन हुआ है । पूँजीपतियों ने मज़्दूर और ग़रीबों को दबाए रखा और बुरी तरह उनका शोषण किया । इससे धीरे-धीरे सामन्तों और श्रमिकों के दो स्थायी वर्ग उत्पन्न हो गए और उनके बीच संघर्ष होने लगा । आज यह संघर्ष अपने उत्कर्ष पर पहुँच चुका है । पूँजीपति, श्रमिक से अनुचित लाभ उठाना चाहता है और श्रमिक अपने अधिकार से अधिक की माँग करता है । बात इसी सीमा तक नहीं रुकी बल्कि मनुष्य की आर्थिक स्थिति उसके सम्मान एवं अपमान का मापदण्ड बन गई । पूँजीपति ने, जो केवल अपनी पूंजी के द्वारा भोग, विलास करता है, समाज में सम्मान का स्थान प्राप्त कर लिया और जो बेचारा अपनी मेहनत-मज़दूरी से अपनी जीविका कमाता है उसे तुच्छ और नीच समझा जाने लगा । इस्लाम ने इन दोनों बातों का मूलोच्छेद किया है । उसने एक ओर तो निर्धनता की समस्या का समाधान किया, पूँजीपतियों की सम्पत्ति में निर्धनों का अधिकार निश्चित किया, धन के संचय करने और ख़र्च करने पर नैतिक और वैधानिक प्रतिबन्ध लगाए, प्रत्येक व्यक्ति को जीविका की खोज पर उभारा, वैध साधनों की प्राप्ति में सहायता दी और जो व्यक्ति आर्थिक दौड़-धूप न कर सके उसके भरण-पोषण का बोझ उठाया । दूसरी ओर स्पष्ट रूप से कहा कि धन-दौलत सम्मान प्राप्त करने का साधन नहीं है । संसार ने अगर

उसे सम्मान का मानदण्ड बना लिया है तो अनुचित किया है । उसे इस मानदण्ड को छोड़ना पड़ेगा । कल क़ियामत के दिन अल्लाह तआला मनुष्य की सम्पत्ति को नहीं बल्कि उसके कर्मों को देखेगा । वहाँ सफल वही होगा जिसके कर्म उत्तम होंगे । दुराचारी मनुष्य को ईश्वर की पकड़ से कोई चीज़ बचा न सकेगी ।

क़ुरआन में स्पष्ट शब्दों में है :

وَمَآ اَمْوَالُكُمْ وَلَآ اَوْلَادُكُمْ بِالَّتِیْ تُقَرِّبُكُمْ عِنْدَنَا زُلْفٰۤی اِلَّا مَنْ اٰمَنَ وَعَمِلَ صَالِحًا فَاُولٰٓئِكَ لَهُمْ جَزَآءُ الضِّعْفِ بِمَا عَمِلُوْا وَهُمْ فِی الْغُرُفٰتِ اٰمِنُوْنَ ۞ وَالَّذِیْنَ یَسْعَوْنَ فِیْۤ اٰیٰتِنَا مُعٰجِزِیْنَ اُولٰٓئِكَ فِی الْعَذَابِ مُحْضَرُوْنَ ۞ (سبا: ٣٧-٣٨)

"यह तुम्हारा धन और तुम्हारी सन्तान नहीं है जो तुम्हें हमसे निकट करती हो । हाँ, मगर जो ईमान लाए और अच्छा काम करे । यही लोग हैं जिनके लिए उनके कर्म का दोहरा बदला है, और वे ऊँचे भवनों में निश्चिन्तता के साथ रहेंगे । रहे वे लोग जो हमारी आयतों को नीचा दिखाने के लिए दौड़-धूप करते हैं, तो वे यातना में ग्रस्त होंगे ।"

(क़ुरआन—34:37-38)

धन-दौलत ही नेतृत्व और सत्ता के अधिकार का भी मानदण्ड रही है । जिन लोगों के हाथों में ख़ज़ानों की कुंजियाँ थीं उन्हीं लोगों ने सामान्यतः निर्धन जनता पर शासन किया और उनके साथ पशुओं से भी बुरा व्यवहार किया । इस्लाम ने इस मानदण्ड को भी बदला । क़ुरआन मजीद ने बनी इसराईल की एक घटना के सन्दर्भ में यह वास्तविकता समझाई है कि मनुष्य नेतृत्व के योग्य धन के कारण नहीं होता बल्कि इसके लिए उत्तम मानसिक एवं शारीरिक योग्यताओं की आवश्यकता है । बनी इसराईल ने अपने एक नबी से निवेदन किया कि हम अपने शत्रु (अमालक़ा) से मुक़ाबला करना चाहते हैं । अतः हमारे लिए एक सेनापति का चयन किया जाए । उस समय के नबी ने एक सुयोग्य व्यक्ति "तालूत" का चयन किया । क़ौम इस चयन पर अप्रसन्न हो गई और कहा :

اَنّٰی یَكُوْنُ لَهُ الْمُلْكُ عَلَیْنَا وَنَحْنُ اَحَقُّ بِالْمُلْكِ مِنْهُ وَلَمْ یُؤْتَ سَعَةً مِّنَ الْمَالِ ؕ (البقرہ: ٢٤٧)

"हम पर सम्राट बनने का वह कैसे अधिकारी हो गया ? उसके मुक़ाबले में राज्य के हम ज़्यादा हक़दार हैं। वह तो कोई बड़ा धनवान व्यक्ति भी नहीं है।" (क़ुरआन—2:247)

नबी ने इस अज्ञानता पूर्ण बात को सुनकर जवाब दिया :

إِنَّ اللَّهَ اصْطَفَاهُ عَلَيْكُمْ وَزَادَهُ بَسْطَةً فِي الْعِلْمِ وَالْجِسْمِ وَاللَّهُ يُؤْتِي مُلْكَهُ مَن يَشَاءُ وَاللَّهُ وَاسِعٌ عَلِيمٌ

(البقرہ : ٢٤٧)

"अल्लाह ने तुम्हारे मुक़ाबले में उसी को चुना है और उसको मानसिक और शारीरिक दोनों प्रकार की योग्यताएँ अत्यधिक प्रदान की हैं और अल्लाह को अधिकार है कि अपना राज्य जिसे चाहे दे, अल्लाह बड़ी समाईवाला है और वह सब कुछ जानता है।" (क़ुरआन—2:247)

इसका तात्पर्य यह है कि तालूत की चाहे कोई आर्थिक सामर्थ्य न हो, उसके अन्दर असाधारण ज्ञान और उच्च कोटि की कार्यकुशलता मौजूद है। ईश्वर के नज़दीक इन्हीं विशेषताओं का महत्त्व है। इसलिए उसी को सरदार होना चाहिए और कोई कारण नहीं कि उसकी सरदारी को स्वीकार न किया जाए।

हदीसों में भी इस वास्तविकता को विभिन्न दृष्टिकोणों से समझाया गया है कि ईश्वर के निकट महत्त्व धन-दौलत का नहीं, बल्कि नेकी और परहेज़गारी का है।

हज़रत सहल बिन साद सादी (रज़ि०) फ़रमाते हैं कि एक व्यक्ति उधर से गुज़रा (कुछ अन्य रिवायतों से ज्ञात होता है कि वह क़ुरैश का था, धनवान था और अच्छे लिबास में था) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने सहाबा (रज़ि०) से पूछा कि इसके सम्बन्ध में तुम लोगों की क्या राय है ? एक व्यक्ति ने कहा यह तो प्रतिष्ठित लोगों में से है, इस योग्य है कि कहीं सम्बन्ध के लिए पैग़ाम भेजे तो इसका निकाह हो जाए और किसी की सिफ़ारिश करे, तो उसकी सिफ़ारिश सुनी जाए। थोड़ी देर के पश्चात् एक निर्धन व्यक्ति उधर से गुज़रा। आप (सल्ल०) ने लोगों से उसके सम्बन्ध में पूछा तो कहा गया कि यह ग़रीब मुसलमानों में से एक है। इस योग्य नहीं है कि कहीं पैग़ाम भेजे तो निकाह हो जाए, या किसी की सिफ़ारिश करे तो सिफ़ारिश सुनी जाए। आपने फ़रमाया जिसे तुमने प्रतिष्ठित कहा उस जैसे मनुष्यों से यह पूरी धरती भर जाए तो भी उन सबकी तुलना में ऐसा एक निर्धन आदमी उत्तम है। (बुख़ारी-किताबुन्निकाह)

हज़रत अबू हुरैरह (रज़ि०) की रिवायत है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०)

ने फ़रमाया :

ان اللہ لا ینظر الی صورکم و اموالکم ولکن ینظر الی
قلوبکم و اعمالکم (مسلم، کتاب البر والصلہ، باب تحریم ظلم المسلم)

"अल्लाह तआला तुम्हारे रूप-रंग और धन-दौलत को नहीं देखता बल्कि वह तुम्हारे दिलों और तुम्हारे कर्मों को देखता है ।"

(मुस्लिम, किताबुल बिर वस्सिला)

तक़वा (ईशपरायणता) का अर्थ विस्तृत है

यह बात अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने अन्य अवसरों पर भी बताई है कि ईमान और तक़वा ही बड़प्पन का वास्तविक आधार है, ईश्वर इसी को देखता है । तक़वा का अर्थ बहुत विस्तृत है । इसके अन्दर ईश्वर का सही ज्ञान, उसके आदेशों का पालन, उसके बन्दों के अधिकारों की अदायगी, भलाइयों को क़ायम करने और बुराइयों को मिटाने की कोशिश सभी बातें सम्मिलित हैं । कुछ हदीसों में इन सब पहलुओं को खोल भी दिया गया है । दर्रा, अबी लहब की बेटी कहती हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) मिम्बर पर थे कि एक व्यक्ति ने आपसे पूछा, "सबसे अच्छा इंसान कौन है ?" आप (सल्ल०) ने जवाब दिया :

خیر الناس اقراءھم و اتقاھم للہ عزوجل و امرھم
بالمعروف و انہاھم عن المنکر و اوصلھم للرحم ٥

(مسند احمد : ٦/٤٣٢)

"इंसानों में सबसे अच्छा वह है जो उनमें से सबसे अधिक ईश्वर की किताब पढ़नेवाला, सबसे अधिक अल्लाह तआला से डरनेवाला, सबसे अधिक भलाई का आदेश देनेवाला और बुराइयों से रोकनेवाला और सबसे अधिक सम्बन्धों को जोड़नेवाला हो ।" (मुसनद अहमद– 6/432)

ये हैं वे महान विशेषताएँ जो मनुष्य को सम्मान एवं श्रेष्ठता का अधिकारी बनाती हैं । अल्लाह के रसूल (सल्ल०) के निकट इन्हीं विशेषताओं का मूल्य एवं महत्त्व था । हज़रत आइशा (रज़ि०) फ़रमाती हैं कि 'तक़वा' के अतिरिक्त संसार की कोई वस्तु आपकी दृष्टि में भाती नहीं थी ।

مَا اَعْجَبَ رَسُوْلَ اللّٰہِ صلی اللہ علیہ وسلم شیٌٔ من الدنیا
ولا اعجبہ احد قط الا ذو تقی۔ (مسند احمد ۶/ ۶۹)

"अल्लाह के रसूल (सल्ल०) को दुनिया की कोई चीज़ प्रीतिकर न थी और न कोई व्यक्ति आपको प्रीतिकर लगता था, सिवाए उसके जो (अल्लाह का) डर रखनेवाला होता ।" (मुसनद अहमद– 6/69)

उपसंहार

इस प्रकार इस्लाम इनसान के अन्दर यह विश्वास पैदा करता है कि सारे इनसान ईश्वर के बन्दे और उसके ग़ुलाम हैं । वे सब एक परिवार के सदस्य हैं । जिनको मिल-जुल कर ईश्वर की इबादत का कर्त्तव्य निभाना है । वे एक हैं और एक ही काम के लिए पैदा किए गए हैं । ईश्वर की दृष्टि में न कोई नीच है और न कोई उच्च । सबकी हैसियत समान है, इनसानों के बीच भाषा, वर्ण, राष्ट्र और वतन की जो भिन्नता पाई जाती है उसकी कोई वास्तविकता नहीं है । ये कुछ छोटे-छोटे कारणों से उत्पन्न होती हैं । कल क़ियामत के दिन इनसान के भाग्य का निर्णय इन तुच्छ कारणों के आधार पर नहीं होगा बल्कि उसके ईमान और कर्म के आधार पर होगा । वहाँ सम्मानित वह होगा जो ईश्वर का आज्ञाकारी है, जिसके अन्दर तक़वा (ईशपरायणता) पाया जाता है और जिसके कर्म अच्छे हैं । जो इन विशेषताओं से वंचित है उसे ईश्वर के प्रकोप से न कोई पद एवं उपाधि बचा सकती है और न कुलीनता । उसके लिए अपमान ही अपमान है । यह विश्वास ऊँच-नीच के सभी झूठी विशेषताओं को समाप्त कर देता है और सारे इनसान अपने मतभेदों को भूलकर एक पंक्ति में खड़े हो जाते हैं । संसार के विभिन्न और संघर्षरत राष्ट्रों एवं समूहों को केवल इसी आधार पर जोड़ा जा सकता है । इसके अतिरिक्त उसकी एकता का और कोई साधन नहीं है । क्या संसार इसके लिए तैयार है ? भविष्य ही इस प्रश्न का उत्तर दे सकेगा ।

—:समाप्त:—